5

रवींद्रनाथ टैगोर और शिक्षा-दर्शन

मोनिका नांदल*

शिक्षा और दर्शन का प्रारंभ से ही साथ रहा है। जितने भी शिक्षा शास्त्री हए हैं, उनकी विचारधाराएँ उनके शिक्षा कार्यक्रमों से प्रतिफलित हुई हैं। शिक्षा दर्शन की दृष्टि से भारतीय दृष्टिकोण प्रमुख रूप से अध्यात्मवादी रहा है परंतु इसका अर्थ यह नहीं कि भारतीय शिक्षा-दर्शन, सांसारिकता का पूरी तरह से त्याग कर डालता है। इसका उद्देश्य यह है कि शिक्षा को एकांगी नहीं होना चाहिए, उसे भौतिक तथा आध्यात्मिक, दोनों दृष्टियों से संतुलित होना चाहिए। इस रूप से देखा जाए तो भारतीय शिक्षा-दर्शन में आदर्श और व्यावहारिकता, दोनों का सुंदर संगम पाया जाता है। भारतीय दृष्टिकोण के अनुसार प्रवृत्ति और निवृत्ति का सामंजस्य करना ही शिक्षा का मूल उद्देश्य है।

भारतीय शिक्षा-दर्शन को प्रतिफलित करने के लिए कुछ दार्शनिकों ने अपने शिक्षा-दर्शन संबंधी विचार प्रस्तुत किए हैं, जिनमें रवींद्रनाथ टैगोर एक महान दार्शनिक व शिक्षा शास्त्री में सर्वोच्च रहे हैं। इस रूप में वे अपने स्वयं के प्रयासों से ही प्रकट हुए। टैगोर ने अपने जीवन के विकास के साथ-साथ शिक्षा-दर्शन का भी विकास किया। अतः उनके जीवन दर्शन के विकास में जिन तत्वों का प्रभाव पड़ा उन्ही तत्वों का प्रभाव शिक्षा-दर्शन के विकास पर भी पड़ा। उन्होंने स्वयं ही शिक्षा के उन सभी सिद्धांतों की खोज की जिनका आगे चलकर प्रतिपादन करना था और अपने "शांतिनिकेतन" के प्रयोगों में काम में लाना था।

टैगोर के विचार में निरक्षरता और शिक्षा की उपेक्षा देश के सतत सामाजिक पिछड़ेपन का कारण तो थी ही, साथ ही यह देश के आर्थिक विकास की संभावना और पहुँच के रास्ते में अवरोध उत्पन्न कर रही थी। इसका मूलभूत कारण बुनियादी शिक्षा की कमी को बताते हुए टैगोर कहते हैं — *"मेरी नज़र में भारत के हृदय पर संतापों का जो अंबार लगा है, उसकी एकमात्र जड़ अशिक्षा है।"* टैगोर ने अपने शैक्षणिक जीवन में शिक्षा प्रणाली का अप्राकृतिक दबाव सदैव महसूस किया। रवींद्रनाथ को प्राप्त हुए अनुभवों ने उन्हें 'शिक्षा में स्वतंत्रता' के महत्त्व का आजीवन विश्वास प्रदान किया। उन्होंने सहानुभूति और संवेदनशीलता के विकास के लिए कलाओं तथा एक-दूसरे की संस्कृति एवं प्राकृतिक वातावरण

* *प्रोजेक्ट फ़ैलो,* दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

October 2016.indd 24 8/16/2017 3:36:55 PM

के घनिष्ठ संबंध की अनिवार्यता के महत्त्व का भी एहसास किया। परिवार की सर्वव्यापी गतिविधियों में सम्मिलित होने में सामान्य या विशिष्ट प्रकार की उन संकुचित स्थितियों का विरोध किया जो मानव को मानव से अलग करती हैं। उन्होंने शिक्षा को अपनी सांस्कृतिक विशिष्टता बनाए रखते हुए अन्य संस्कृतियों के समृद्ध पक्षों के समान माना है। टैगोर का विश्वास था कि ईश्वर का प्रकटीकरण मनुष्य की अपेक्षा प्रकृति के द्वारा अधिक स्पष्ट है। बालक की शिक्षा प्रकृति की गोद में होनी चाहिए जिससे उसमें संसार की सभी वस्तुओं में मेल तथा प्रेम की भावना विकसित हो जाए। इस संदर्भ में टैगोर लिखते हैं— *"सर्वोत्तम शिक्षा वह है जो हमें सूचना तथा ज्ञान ही प्रदान नहीं करती अपितु हमारे जीवन का विश्व के समस्त जीवों के साथ मेल उत्पन्न करती है।"*

शिक्षा का सबसे अधिक संबंध बालक से होता है। टैगोर ने विद्यार्थी की स्वतंत्र एवं प्राकृतिक शिक्षा पर ज़ोर अवश्य दिया, परंतु समाज-सुधारक होने के नाते उन्होंने शिक्षा को समाज की जीवनदायनी धारा मानते हुए समाज सेवा का उत्तम साधन माना। टैगोर विश्व बंधुत्व में विश्वास करते थे। उनके अनुसार समाज का अर्थ संकुचित न होकर विश्व समाज का था। टैगोर के अनुसार शिक्षा जीवन के अनुसार होनी चाहिए। यदि शिक्षा जीवन से अलग हो जाएगी तो दूसरे समाज को इसका लाभ नहीं मिल सकेगा। टैगोर ने स्वयं लिखा है कि *"प्रकृति के पश्चात् विद्यार्थी को सामाजिक व्यवहार की धारा के संपर्क में लाया जाना चाहिए।"* टैगोर ने शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास के आधार पर बालक के विकास की परिकल्पना की है। टैगोर ने जहाँ नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों, जैसे— अनुशासन का मूल्य, मनुष्य के आंतरिक विकास का मूल्य, शांति, धैर्य एवं साहस का मूल्य आदि को बालक के विकास में सहायक बताया वहीं उनका विचार था कि बालक को जीवन की वास्तविक परिस्थितियों, विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों तथा पर्यावरण की जानकारी करायी जाए ताकि उसमें सामंजस्य की क्षमता का विकास किया जा सके। उन्होंने मानव के आध्यात्मिक विकास हेतु प्रकृति को केवल एक सर्वश्रेष्ठ साधन के रूप में स्वीकार किया है। इस दृष्टि से डॉ.एस.राधाकृष्णन के शब्दों में— *"रवींद्रनाथ ने किसी मौलिक दर्शन को उत्पन्न करने का दावा कभी नहीं किया, उनका लक्ष्य भारतीय परंपरा का विश्लेषण करना अथवा उस पर चिंतन करना नहीं था। उन्होंने इसको अपनी स्वयं की सजीव शैली तथा सामान्य अलंकारिक भाषा में व्यक्त किया तथा आधुनिक जीवन में उसका औचित्य बताया।"*

टैगोर ने शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धांतों को बताते हुए कहा कि शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक स्तर पर सुधार किया जा सकता है। उनके अनुसार, शिक्षा राष्ट्रीय होनी चाहिए एवं उनमें भारत के भूत एवं भविष्य का ध्यान रखना चाहिए ताकि बालक को भारतीय समाज एवं भारतीय विचारधारा के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन कराया जा सके। शिक्षा का कार्य केवल बालकों को अच्छा लिपिक, किसान, शिल्पी या वैज्ञानिक बना देना नहीं है, अपितु उन्हें अनुभवों की पूर्णता द्वारा पूर्ण मनुष्य के रूप में विकसित करना भी है। अनंत मूल्यों की प्राप्ति विदेशी भाषा से संभव

October 2016.indd 25 8/16/2017 3:36:55 PM

नहीं है। अतः मातृभाषा का प्रयोग करना चाहिए। कला माध्यम को शिक्षा के लिए अनिवार्य मानते हुए उन्होंने कहा कि प्रत्येक विद्यार्थी में चित्रकला, संगीत, अभिनय की योजनाओं का भली-भाँति विकास करना चाहिए। आगे उनका मानना है कि शिक्षा को गतिशील एवं सजीव तभी बनाया जा सकता है, जबकि उसका आधार व्यापक हो और समुदाय के जीवन से उसका संबंध घनिष्ठ हो। टैगोर ने शिक्षा द्वारा बालकों को "सत्यम् शिवम् सुंदरम्" जैसे मूल्यों का परिचय कराये जाने पर बल दिया है। शिक्षा ऐसी हो जो बालकों में पर-दुःखकातरता, परोपकारिता और सहिष्णुता आदि गुणों का विकास करने में सक्षम हो सके। शिक्षा द्वारा बालकों में उच्च कोटि की धार्मिकता की भावना का विकास किया जाना चाहिए, जिससे उनमें मानवता का कल्याण करने की भावना का विकास हो।

टैगोर ने मानव के पूर्ण विकास के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए मानव जीवन के शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक सभी पक्षों को सामंजस्यपूर्ण ढंग से विकसित करने के लिए एक व्यापक क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम की रचना की, जिससे प्रत्येक बालक विभिन्न प्रकार की क्रियाएँ करते हुए अपने ज्ञान को व्यावहारिक क्षेत्र में प्रयोग करके पूर्ण मानव के रूप में विकसित हो सके। कहा जा सकता है कि टैगोर ने प्रचलित पाठ्यक्रम के दोषों को दूर करने के लिए उसमें विभिन्न विषयों के साथ-साथ सहगामी क्रियाओं को भी स्थान दिया। इस संबंध में टैगोर का विचार था कि बालक का विकास उसकी रुचियों तथा आवेगों के अनुसार होना चाहिए। इसके लिए उसे प्रत्यक्ष स्रोतों से स्वतंत्र प्रयासों द्वारा प्रत्यक्ष ज्ञान को अर्जित करने के अवसर मिलने आवश्यक हैं।

शिक्षण प्रक्रिया, शिक्षा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है जिसके आधार हम बालक को उसके परिवेश के अनुरूप अध्ययन के अवसर प्राप्त करवा सकते हैं। जब बच्चे कोई विचार अपनाते हैं और उसे कार्यरूप देते हैं तब इसके बारे में हमेशा एक नवीनता रहती है, जो स्वैच्छिक और वास्तविक सृजन के आनंद से भरपूर होती है। शिक्षण संबंधित अपने विचार रखते हुए टैगोर का कहना है कि शिक्षण को विद्यार्थी की स्वाभाविक रुचियों और आवेगों पर आधारित होना चाहिए। कक्षा कक्ष में अध्यापन के लिए प्रयुक्त की जाने वाली शिक्षण विधियाँ जीवन की वास्तविक परिस्थितियों, प्रकृति की वास्तविक बातों और समाज के वास्तविक जीवन के अनुकूल होनी चाहिए। उनके शिक्षा-दर्शन में शिक्षण विधि में वाद-विवाद और प्रश्नोत्तर का प्रयोग किया जाना चाहिए ताकि बालक को जिज्ञासु प्रवृत्ति का बनाया जा सके। शिक्षण विधि में नृत्य, अभिनय, संगीत, दस्तकारी, व्यावसायिक शिक्षा को महत्त्व देते हुए टैगोर ने जीवन व्यापन द्वारा जीवन जीने और सीखने पर बल दिया है।

बालक की सर्वांगीण विकास यात्रा में शिक्षक एक मार्गदर्शक की भूमिका अदा करता है। इस संदर्भ में टैगोर ने शिक्षण विधि की तुलना में शिक्षक को बहुत अधिक महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। उनके अनुसार, *"शिक्षा केवल शिक्षक के ही द्वारा और शिक्षण विधि के ही द्वारा नहीं प्रदान की जा सकती है क्योंकि व्यक्ति केवल व्यक्ति से ही सीखता है।"*

October 2016.indd 26 8/16/2017 3:36:55 PM

इसलिए शिक्षक को पूर्वाग्रही, संकीर्ण, असहिष्णु, अधीर एवं अहंकारी नहीं होना चाहिए। रवींद्रनाथ टैगोर ने शिक्षक को शिक्षा व्यवस्था का केंद्र बिंदु माना है तथा उन्होंने शिक्षक के प्रमुख दायित्वों को बताते हुए कहा है कि शिक्षक और विद्यार्थी को एकसमान रूप से सांस्कृतिक परंपराओं का अनुसरण और सत्य की खोज करनी चाहिए। उनके अनुसार शिक्षक को विद्यार्थी के जीवन को गति, मस्तिष्क के बंधन से मुक्ति प्रदान करनी चाहिए ताकि विद्यार्थी अपने अनुभव द्वारा अधिक सरलता और दक्षता से सीख सकें। शिक्षक को शिक्षण विषयों के साथ-साथ जीवन के सिद्धांतों, आत्मा की पवित्रता और व्यक्तिगत प्रेम में विश्वास करना चाहिए। टैगोर का मानना है कि शिक्षक को कक्षा में प्रेरणादायी व शिक्षाप्रद अनुभव प्रदान कराने चाहिए न कि केवल पुस्तकीय ज्ञान। इसका कारण यह है कि ऐसा करने से शिक्षक विद्यार्थी को ज्ञान का अर्जन करने की प्रेरणा प्रदान नहीं कर सकता है।

अत: कहा जा सकता है कि टैगोर बीसवीं शताब्दी के एक महान दार्शनिक थे। उनकी महानता इस बात से थी कि उन्होंने विदेशी राज्य द्वारा निर्धारित की हुई नीरस तथा निष्क्रिय शिक्षा के विरोध में एक शिक्षा-दर्शन का विकास किया जिसकी भारत को आवश्यकता थी तथा जिसके द्वारा संपूर्ण मानव का विकास किया जा सकता है। इस दृष्टि से एच.बी. मुखर्जी के शब्दों में कहा जा सकता है — *"टैगोर वर्तमान भारत के शैक्षणिक पुनरुत्थान के सबसे बड़े पैगंबर थे। उन्होंने देश के सम्मुख शिक्षा के सर्वोच्च आदर्शों को स्थापित करने के लिए आजीवन संघर्ष किया। उन्होंने अपनी शैक्षिक संस्थाओं में ऐसे शैक्षिक प्रयोग किए जिन्होंने उन्हें आदर्श का सजीव प्रतीक बना दिया।"* इस आधार पर उनका मानना था कि शिक्षा का काम प्रकृति की भांति मानवीय परिवेश के साथ बोध को जागृत करना था। शिक्षा का काम केवल बौद्धिक विकास करना नहीं है बल्कि मानव की कोमल वृत्तियों का विकास करना भी है। इसीलिए शिक्षा में धर्म और दर्शन ही नहीं, साहित्य और कला को भी महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिए।

टैगोर का शिक्षा-दर्शन वर्तमान समय में शिक्षा के क्षेत्र में अपनी उपयोगिता और सार्थकता को इंगित करवाता है।

ग्रंथ सूची

गुप्ता, उमा दास. 2006. *रवींद्रनाथ टैगोर — माई लाइफ़ इन माई वर्ड्स*. पैंगविन, इंडिया.

मिश्रा, जयश्री नायर. *टैगोर — प्रज्ञता का जीवन*. अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलुरु.

स्वरूप सक्सेना, एन. आर. 2008. *शिक्षा के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय सिद्धांत*. आर.लाल बुक डिपो, मेरठ.

October 2016.indd 27 8/16/2017 3:36:55 PM